बौद्ध दर्शन में प्रतीत्यसमुत्पाद

(Dependent Origination)

'प्रतीत्यसमुत्पाद' बौद्ध दर्शन का एक अत्यन्त प्रसिद्ध सिद्धांत है, जो मुख्य रूप से बौद्ध दर्शन के द्वितीय आर्य-सत्य 'दुःख समुदय' अर्थात् 'दुःख के कारण' पर प्रकाश डालता है।

प्रतीत्यसमुत्पाद (पालि = पटिच्चसमुप्पाद) शब्द वस्तुतः दो शब्दों से मिलकर बना है - प्रतीत्य + समुत्पाद।
प्रतीत्य का अर्थ है - एक वस्तु की प्राप्ति होने पर।
समुत्पाद का अर्थ है - अन्य वस्तु की उपस्थिति।
इस प्रकार से प्रतीत्यसमुत्पाद का अर्थ हुआ - "एक वस्तु की प्राप्ति होने पर अन्य वस्तु की उत्पत्ति"। इसे आश्रित उत्पत्ति का सिद्धांत भी कहा जाता है।

दूसरे शब्दों में प्रतीत्यसमुत्पाद 'कार्य-कारणवाद' अर्थात् एक कारण होने पर एक कार्य की उत्पत्ति का सिद्धांत भी है। इस तरह से यहाँ प्रतीत्यसमुत्पाद का अर्थ है - सापेक्ष-कारणतावाद अर्थात् प्रत्ययों से उत्पत्ति का नियम। कार्य सदा कारण सापेक्ष होता है। कारण के होने पर ही कार्य होता है। बौद्ध दर्शन के अनुसार कोई भी घटना, चाहे वह भौतिक हो या अभौतिक, अकारण नहीं घटती। प्रत्येक घटना का कोई-न-कोई कारण अवश्य होता है और यदि वह कारण न हो तो वह घटना भी घटित न हो। श्रीमती रिज डेविस ने प्रतीत्यसमुत्पाद की व्याख्या करती है कि यह - "यदि वह है तो यह है, उसके उदय से ही इसका उदय है" का सिद्धांत है।

सापेक्ष दृष्टि से देखने पर पता चलता है कि प्रतीत्यसमुत्पाद दुःखसमुदय-रूप संसार है और पारमार्थिक दृष्टि से यह प्रपंचोपशम एवं शिव निर्वाण है। इसका नियम है - 'आस्मिन् (करणे) सति, इदं (कार्य) भवति' अर्थात् कारण के होने पर कार्य होता है। जो उत्पन्न होता है वह कार्य होता है, जो कार्य है वह सापेक्ष है और जो सापेक्ष है, वह वस्तुतः न 'सत्' है और न 'असत्'। यह केवल 'प्रतीति' मात्र है।

यह बुद्ध की मध्यमा प्रतिपदा है, जो इन्द्रियों तथा बुद्धिविकल्पों के द्वारा अनुभूत है एवं समस्त लौकिक पदार्थों को सापेक्ष और प्रातीतिक मानती है तथा दोनों 'अन्तों' का निषेध करती है। इसे ही 'तथता', 'अवितथता' और 'अनन्यतथता' भी कहा गया है।

प्रतीत्यसमुत्पाद कार्य-कारण-श्रृंखला रूपी द्वादशांग-चक्र है, जिसे 'भवचक्र', 'संसार-चक्र', 'जन्ममरण-चक्र' और 'धर्मचक्र' भी कहा जाता है। इसके बारह (12) अंग या निदान हैं जो कारण-कार्यरूप से चक्रवत् घूमते रहते हैं। यह द्वादश-निदान तीन निदानों में विभक्त है- अतीत जन्म सम्बन्धी निदान, वर्तमान जीवन संबंधित और भविष्य-जीवन से सम्बद्ध निदान। यह गत, आगत और अनागत एक ही श्रृंखला की तीन कड़ियां हैं। भूत जीवन के कारण ही हमें वर्तमान जीवन प्राप्त है तथा वर्तमान जीवन के कारण भी भविष्य जीवन की प्राप्ति होगी। इस प्रकार यह जन्म-मरण का चक्र हमेशा चलता रहा है। वे इस प्रकार से हैं—

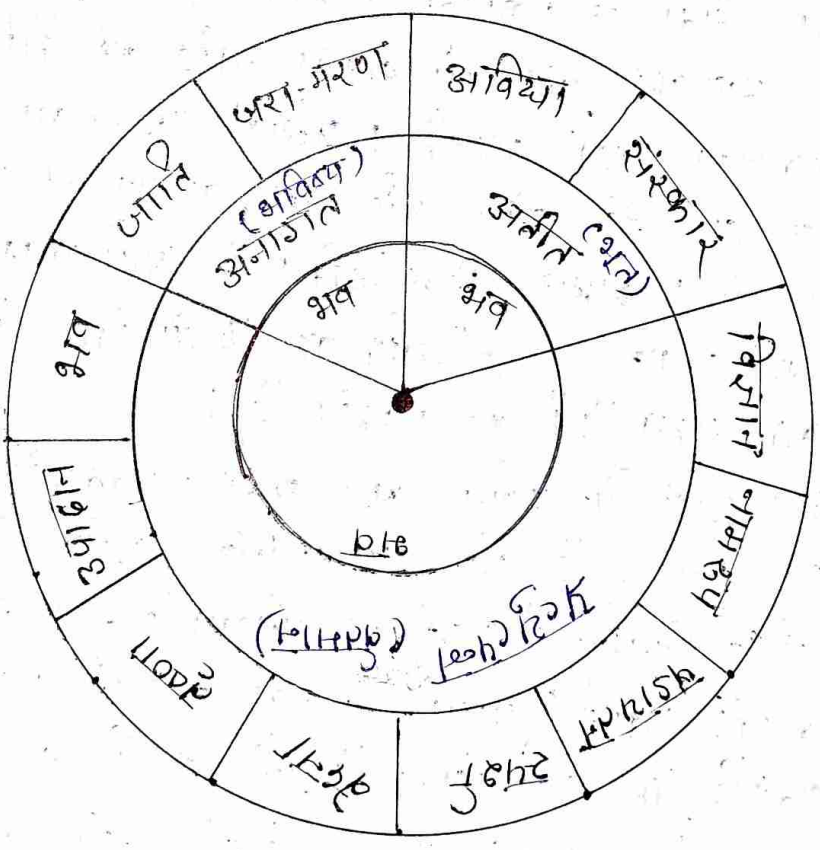

द्वादश निदान (Twelve Links) :→ ये बारह (12) कड़ियां हैं -

(1). जरामरण → हम देखते हैं कि इस संसार में सर्वत्र दुःख ही दुःख है, पर सबसे बड़ा दुःख है - जरा - मरण। यहाँ जरा का अर्थ है - जीर्ण होना अर्थात् वृद्धावस्था तथा मरण का अर्थ है - मृत्यु। यह मृत्यु जीवन का साक्षात् अंत है। वृद्धावस्था से ही हमारा क्षय होना प्रारम्भ हो जाता है, जैसे - अंगों का शिथिल होना, केशों का पकना, दाँतों का टूटना आदि। इस तरह अत्यंत दुःखदायी जरा-मरण इस निदान की प्रथम कड़ी है। और इस जरामरण का कारण है - जाति।

(2). जाति → इस जरामरण का कारण जाति है। जाति अर्थात् जन्म लेना। क्योंकि यदि जाति ही न हो तो मनुष्य को किसी भी तरह के दुःख ही न हों। पर जाति का कारण क्या है?

(3). भव → जाति का कारण है - भव। भव से तात्पर्य है - जन्म ग्रहण करने की इच्छा। यदि यह प्रवृत्ति मनुष्य में न हो तो उसका जन्म ही न हो। तब इस भव का कारण क्या है?

(4). उपादान → भव का कारण है - 'उपादान' अर्थात् जगत की वस्तुओं के प्रति राग एवं मोह। हमारे भव अर्थात् जन्म ग्रहण करने की प्रवृत्ति का कारण वस्तुओं के प्रति रांग एवं मोह (उपादान) को बताया गया है। किंतु इसका कारण क्या है?

(5). तृष्णा → उपादान का कारण तृष्णा है। यह तीव्रता ही हमारी सभी सांसारिक दुःखों का मूल होती है। तृष्णा अर्थात् विषयों के प्रति हमारी आसक्ति। पर यह तृष्णा उत्पन्न क्यों होती है?

(6). वेदना → तृष्णा का कारण हमारी वेदना है। यहाँ वेदना से तात्पर्य है - हर प्रकार की अनुभूति। यह तीन प्रकार की होती है - सुखावेदना, दुःखावेदना और असुखादुःखावेदना। अनुकूल अनुभूति सुख है तथा प्रतिकूल अनुभूति का नाम है - दुःख। सुख और दुःख दोनों से परे तटस्थता की अनुभूति है। इसे ही हम उपेक्षणीय अनुभव भी कहते हैं। इस प्रकार से इन तीनों अनुभूतियों का सम्मिलित नाम ही वेदना है।

(7). स्पर्श → वेदना का कारण स्पर्श है। 'स्पर्श' कहते हैं - इन्द्रियों और विषयों से संयोग की अवस्था को। अत हमें ज्ञान प्राप्ति हेतु इन छः प्रकार की इन्द्रियों के सम्पर्क की आवश्यकता होती है। इस प्रकार से स्पर्श विषयानुभूति की अवस्था है।

(8). षडायतन → स्पर्श का कारण बुद्ध 'षडायतन' को बतलाते हैं। आँख, नाक, कान, जिह्वा, त्वचा और मन - ये छः इन्द्रियाँ ही वे छः आयतन (षडायतन) हैं, जिनके कारण स्पर्श उत्पन्न होता है।

(9). नामरूप → षडायतन का कारण 'नामरूप' है। 'नामरूप' से तात्पर्य है - 'मन के साथ गर्भस्थ शरीर'। किंतु यह मन-युक्त शरीर बनता क्यों है?

(10). विज्ञान → नामरूप का अस्तित्व 'विज्ञान' अर्थात् चेतना के कारण होता है, क्योंकि जब तक गर्भस्थ भ्रूण में चेतना न हो, तब तक उसका विकास नहीं हो सकता। अतः नामरूप का कारण हुआ 'विज्ञान'। पर इस विज्ञान का कारण क्या है?

(11). संस्कार → विज्ञान का कारण 'संस्कार' है। संस्कार से तात्पर्य है - पूर्व-जन्मों के कर्म। कर्म-संस्कार अर्थात् संस्कारों के रूप में सञ्चित कर्म। बुद्ध के अनुसार कर्म अपना फल अवश्य छोड़ते हैं, ये फल मनुष्य को आवश्यक रूप से भुगतने पड़ते हैं। मृत्यु के बाद भी ये कर्मफल संस्कार के रूप में मनुष्य के पुनर्जन्म का हेतु बनते हैं और इस तरह विज्ञान का कारण होते हैं।

(12). अविद्या → संस्कार का कारण बुद्ध 'अविद्या' को बतलाते हैं। वस्तुतः अविद्या के कारण ही हम ऐसे कर्म करते हैं जिनके फल संस्कार के रूप में पुनर्जन्म का कारण बनते हैं। 'अविद्या' का अर्थ है - अनित्य को नित्य समझना, असत्य को सत्य समझना, अनात्म को आत्म समझना। वस्तुतः यह अविद्या ही समस्त दुःखों की जड़ है। इसलिए दुःख के नाश के लिए इसका नाश सर्वाधिक आवश्यक माना गया है।

इस प्रकार से उपरोक्त 12 कड़ियों को हम भूत से भविष्य एवं भविष्य से भूत के रूप में निम्नवत् रूप से कारण रूप में

समझ सकते हैं जैसे -

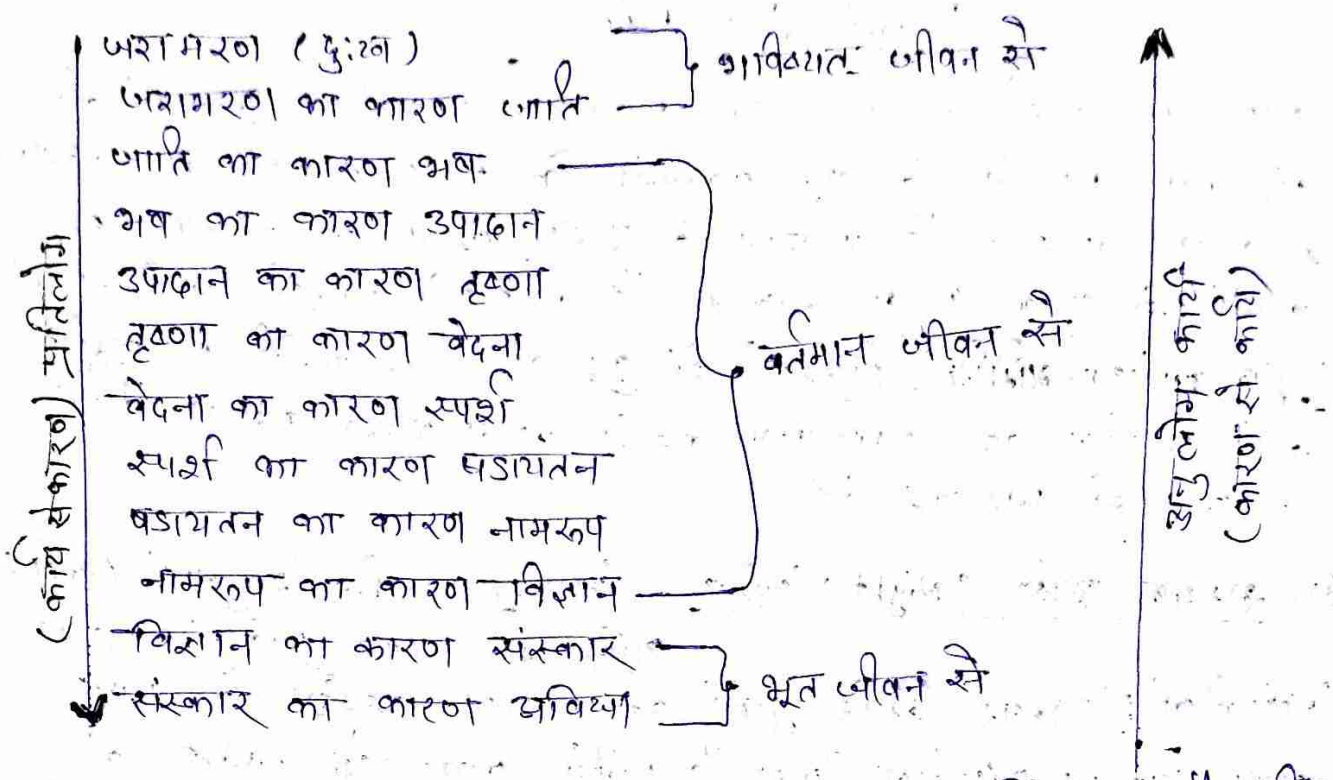

(कार्य से कारण) प्रतिलोम ↓

जरामरण (दुःख)
जरामरण का कारण जाति — भविष्यत् जीवन से
जाति का कारण भव
भव का कारण उपादान
उपादान का कारण तृष्णा
तृष्णा का कारण वेदना
वेदना का कारण स्पर्श — वर्तमान जीवन से
स्पर्श का कारण षडायतन
षडायतन का कारण नामरूप
नामरूप का कारण विज्ञान
विज्ञान का कारण संस्कार — भूत जीवन से
संस्कार का कारण अविद्या

↑ अनुलोम (कारण से कार्य)

इस प्रकार से उपर्युक्त द्वादश निदान बड़े ही मार्मिक एवं वैज्ञानिक भी हैं। वर्तमान जीवन, भूत जीवन के कर्मों का फल है और पुनः यह भविष्यत् जीवन उत्पन्न करेगा। "जिस प्रकार एक दीपशिखा से दूसरी जलती है, नदी की एक धारा से दूसरी धारा उत्पन्न होती है, वैसे ही इस भूत, वर्तमान और भविष्य जीवन की निरन्तर धारा चलती रहती है"। इस प्रकार से तथागत प्रतित्यसमुत्पाद के द्वारा दो अतिवादों नास्तिकवाद और आस्तिकवाद, अकारणवाद और ईश्वरवाद का निषेध करते हैं। बुद्ध ने कहा है कि- "प्रतीत्यसमुत्पाद को देखने वाला ही यथार्थ द्रष्टा है, वही दुःख, दुःखसमुदय, निरोध और निरोध-मार्ग का ज्ञाता है"। -

यः प्रतित्यसमुत्पादं पश्यतीदं स पश्यति।
दुःखं समुदयं चैव निरोधं मार्गमेव च॥ (माध्यमिक कारिका)

—x—